आधुनिक कला के विकास में राजस्थान की कला शिक्षण संस्थाओं का योगदान (एक दृष्टि)

दिनेश कुमार वर्मा
व्याख्याता,
चित्रकला विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
बून्दी।

सारांश

भूमण्डलीकरण के इस दौर में कलाकार वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक एवं गणितीय अवधारणाओं को अपनाकर नवीन कला प्रवृत्तियों को प्रमुखता के साथ रचने लगे हैं। वैश्विक विचारों के आदान–प्रदान से कला की भाषा अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप की बनी, वहीं रूपों के प्रथक्–प्रथक् रचनात्मक स्वरूप से कला व्यक्ति विशेष की बनती जा रही है। कलाकार विषयवस्तु पर जोर न देकर अभिव्यक्ति की कुशलता, वैज्ञानिक प्रभाव से उपजे माध्यम और तकनीक तथा मूर्त–अमूर्त रूपाकारों पर ज्यादा ध्यान देने लगे हैं। आधुनिक कला में बहुआयामी रचना प्रक्रिया सक्रिय होती जा रही है। राजस्थान की कला शिक्षण संस्थाओं में कला का ऐसा ही प्रयोगवादी व रचनात्मक वातावरण बनने लगा है जिससे कला में नवीनता के नाम पर नीत–नवीन विचारों को निरुपित किया जा रहा है। कला शिक्षक अपनी रचनाधर्मिता तथा कला रचना में विविध आयामों के साथ उनकी कलम व तकनिकी से कला सृजन कर रहे हैं। यहीं नहीं, वे आत्मिक तरंग और मनमोहक अभिव्यंजना को रचनापरक सौन्दर्य के साथ रूपांकित कर रहे हैं तथा उनका प्रदर्शन भी कर रहे हैं।

मुख्य शब्द : आधुनिकता, सृजनात्मकता, सौन्दर्य, राजस्थान की कला शिक्षण संस्थाओं में सृजनरत प्रमुख कलाकारों व कला शिक्षकों के नाम, अभिव्यक्ति, मौलिकता, रेखाएँ, आकृतियाँ, संवेगात्मक रूपांकन, माध्यम और तकनीक तथा मूर्त–अमूर्त रूपाकार। आधुनिक कला तत्वों, आयामों व प्रयोगवादिता, रचनाकर्म में निजी विचारों, कला प्रवृत्तियों और रंग, रूप इत्यादि तत्त्वों का संयोजन ।

प्रस्तावना

कलाकार अपनी भावनाओं को मूर्त–अमूर्त रूप में अभिव्यक्त करता रहा। भावाभिव्यक्ति के इस दायरे में ही रचनात्मकता का समावेश होता रहा, जिसे हम राजस्थान की कला शिक्षण संस्थाओं की स्थापना से लेकर वर्तमान तक की आधुनिक कला प्रवृत्तियों के रूप में देख सकते हैं। राज्य की कला शिक्षण संस्थाएँ कार्यशील होते ही कला में आधुनिक कला तत्त्वों, आयामों व प्रयोगवादिता का समावेश होता चला गया। कला में बंगाल के पुनरूत्थान काल की विचारधारा, तकनिकी और शैली विशेष की देशज कलाधारा का प्रभाव तो आया ही साथ ही वैश्विक कलाधारा ने भी कलाकारों व कला शिक्षकों को आधुनिकता व रचनात्मकता के लिए प्रेरित किया। निःसंदेह स्वाधीनता के बाद यूरोपीय कला आन्दोलनों के प्रभाव के साथ आधुनिकता व प्रयोगवादिता का जो आन्दोलन चला उसके नित–नवीन रूप राज्य की आधुनिक कला में दृष्टिगोचर होते हैं।

कला में आधुनिकता मूलतः नूतनता को दर्शाती है। कलाकार समयानुकूल भावबोध, रचना सौन्दर्य तथा नवीन प्रयोगों से कला की नवीन चित्रभाषा इजाद करता है। वैज्ञानिक अनुसंधान और तकनिकी विकास से कला धरातल का दायरा तो बढ़ा ही, कला में रोमांचकारी परिवर्तन भी होने लगे। परम्परागत सोच और वैश्विक विचारधाराओं में बदलाव के कारण कला में मानवीय संवेदनाओं, उनके चिन्तनशील विचारों, सौन्दर्यबोध और कलागत प्रवृत्तियों से आधुनिक संदर्भों की निरपेक्ष अभिव्यक्ति प्राप्त होने लगी। 'आधुनिकता', विशुद्ध भौतिक संदर्भ में, हमारे जीवन में वह बदलाव है जो विज्ञान और औद्योगीकरण की वजह से आया है : आधुनिक कला एक माने में उस बदलाव के साथ नये, कलापूर्ण और सार्थक रिश्तों की तलाश है। कलाओं में आधुनिकता का एक प्रमुख अर्थ यह होगा कि मनुष्य अपनी बनायी चीज़ों और अपने बारे में उपलब्ध नयी पुरानी जानकारियों को किस तरह मानवीय और सुन्दर बनाता है।[1] कलाकार अपने रचनाकर्म में निजी विचारों, कला प्रवृत्तियों और रंग, रूप इत्यादि तत्त्वों को संयोजित कर

सौन्दर्याभिव्यक्ति करता है। यह उसके वैयक्तिक भावनाओं को ही अभिव्यक्त नहीं करती बल्कि समयानुकूल आधुनिक संदर्भों को भी दर्शाती है। कला का यह विश्वव्यापी प्रभाव भारतीय परिदृश्य में ही नहीं बल्कि राजस्थान के कला जगत में भी बहुआयामी विचारों की अन्तर्धारा के साथ विद्यमान है, जो ज्ञानात्मक संवेदनाओं को रचनात्मक संदर्भ देती है। निःसंदेह वैश्विक विचारधारा और भौतिक आदान–प्रदान से राज्य के कलाकारों ने नवसृजन कर कला का स्वरूप विश्वव्यापी विचारधारा से जोड़े रखा। अनुमानतः हर कला अपने समय की आधुनिक कला मानी जाती है। इन कलाओं पर अपने समय का तदनुकूल प्रभाव और विचारधारा निहित होती है। ऐसी कलाओं का मूल्यांकन भी समयानुकूल परिवर्तित दृष्टिकोण और कलागत प्रवृत्तियों से किया जाता है। मुख्यतः जब भिन्न कालीन विचारधारा और सुरुचिपूर्ण कलाकृतियों की तुलना की जाती है। 'All art is modern Art' यानि आधुनिक कलाकार या कला समीक्षक किसी भी अन्य कला का रस ग्रहण अपने आधुनिक दृष्टिकोण से ही कर लेता है।[2] इस प्रकार आधुनिक दृष्टि से कला का स्वरूप तत्कालीन नित–नवीन रचनाओं या आज की कला जैसे शब्दों से समझकर कला के सौन्दर्यात्मक आनन्द को महसूस किया जा सकता है।

रचनाकारों ने आधुनिक कला को जानने और समझने के लिए अपने विचारों को कई तरह से रचा है। जैसे टी. एस. एलिअट ने आधुनिकता में क्लासिकी विचारधारा का पुट जरूरी समझा तो स्पेंडर ने आधुनिक तथा समकालीन के बीच मध्य निहित अन्तर को रेखांकित किया। हेराल्ड रोज़ेनबर्ग ने नये की परम्परा की ओर ध्यानाकर्षण किया। इसी प्रकार फ्रैंक करमोड ने ''आधुनिकता'' को दो वर्गों में विभाजित किया : एक तो, ''प्राक्–आधुनिकतावाद'' जो प्रयोगात्मक होते हुए भी परम्परा और अतीत से भी कुछ–न–कुछ नाता बनाये रखती है; और दूसरा, 'नव–आधुनिकतावाद' जिसमें उन्होंने उन आवाँगार्द कलाओं को रखा है, जो अपने को परम्परा से बिल्कुल तोड़ कर प्रयोगशील है।[3] राजस्थान की कला शिक्षण संस्थाओं की स्थापना के बाद कला जगत में आधुनिक कला की दोनों ही धाराएँ प्रवाहित रही तथा आज भी समानान्तर चल रही है। वस्तुतः राज्य में आधुनिकता का यह प्रभाव भारतीय आधुनिक कला के सहगामी स्वरूप और अकादमिक कला शिक्षा की शुरूआत के साथ प्रवाहित हुआ। पुनरुत्थान काल की विचारधारा अवनीन्द्रनाथ टैगोर, रवीन्द्रनाथ टैगोर, नन्दलाल बोश, असित कुमार हाल्दार आदि कलाकार व कलाकार शिक्षकों और उनके शिष्यों के माध्यम से भारतीय कला जगत में फेल गई। राजस्थान में रचनात्मकता के स्त्रोत स्वरूप, उस कला चेतना का पुनरूत्थान हुआ जिसका वास्तविक अर्थ और मूल्य देशज कला चेतना के मूल तत्व रहे। यूरोपीय कला आन्दोलनों के आग्रह से अनेक वाद–प्रतिवाद कला प्रेरणा के स्त्रोत बने जिससे राज्य की कला में विभिन्न बदलाव आया। तकनिकी विकास और नवीन प्रयोगों से कला में नूतनता बढ़ने लगी और कला की चाक्षुष भाषा को नवीन अर्थ के साथ निरुपित किया गया।

आधुनिक कला सृजन के इस क्रम में कलाकारों ने परम्परागत विचारधारा से जुड़कर रूपाकारों और संयोजन की विशिष्टताओं के साथ निजी विचारों को निरुपित करने लगे। इससे कला में नवीन रूपाकारों और प्रयोगों की विविधता दृष्टिगत होने लगी। यहाँ की रंगचेतना, वातावरणीय प्रभाव, लोक जीवन, शैलीगत परम्परा, नये–नये शिल्प और विविध माध्यमों की प्रयोगशीलता ने एक ऐसे कला संसार की रचना की जो आधुनिक कलाधारा में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। वस्तुतः, कलाकारों ने परम्परागत शैली में परिवर्तन करके निजी रूपों में अपनी कला को रूपायित किया और उसे व्यक्तिवादी रूप दे दिया। इस प्रकार आधुनिक कलाकृतियों के आधार वही रहे, किन्तु उनकी भावभूमि और दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया और शैली का स्थान कलाकार के व्यक्तित्व ने ले लिया।[4] आधुनिक कला में व्यक्तिवादी स्वरूप पारंपरिक कला तक सीमित न होकर वस्तुनिरपेक्ष स्वरूप के साथ कला की अनेक प्रवृत्तियों से जुड़ी हुई है। रचनाकार की ह्रदयगत भावनाओं में आदिमकाल से समकालीन कला जगत तक की चेतना स्फूर्त हो रही है। कलाकारों ने बनी बनायी वस्तुओं में कुछ संवेदनशील रूपाकारों को जोड़–काट–छांटकर नवीन कलाकृतियों का सृजन किया है। यही नहीं, कला सृजन का दायरा शिलाओं से चलकर कम्प्यूटर स्क्रीन तक पहुंच गया है जिससे कला में संयोजन की विभिन्न संभावनाओं के साथ आधुनिकता बढ़ने लगी है।

आधुनिक कला के विकास में राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट, जयपुर की भूमिका प्रमुख मानी जाती है। इस कला शिक्षण संस्थान के संस्थापक स्व. महाराजा सवाई मानसिंह द्वितीय (1835–1880 ई.) जयपुर नरेश थे, जिन्होंने सन् 1857 में कला शिक्षा की उचित व्यवस्था के ध्येय से सिटी पेलेस के बादल महल में 'हुनरी मदरसा' नाम से इसे शुरू किया।[5] अंग्रेज शिक्षक डॉ. सी.एस. वेलेन्टाईन इस संस्था के प्रथम प्राचार्य थे।[6] इस संस्थान के प्रारम्भिक दौर में कला शिक्षा व आधुनिक कला के विकास की बागडोर अंग्रेजी कलाकार शिक्षकों के हाथों में रही जो राज्य के कलाकार विद्यार्थियों को विदेशी रूचि के मुताबिक शिक्षा देते थे। इस समय कलाकार या तो राजाओं के पोथीखानों, सूरतखानों अथवा सरस्वती भण्डारों में चित्रण कार्य करते थे या फिर जयपुर के स्कूल ऑफ आर्ट में सेवारत या स्वतन्त्र रूप से कार्य करते थे।[7] संस्थान में सन् 1869 ई. में चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला एवं हस्तकला की विधिवत् कक्षाऐं प्रारम्भ की गयी।[8] चित्रकला के क्षेत्र में रामचन्द्र मुसव्वर, लक्ष्मीनारायण, गंगाबक्श, पं.शिवनन्द, छाजुराम, नारायण प्रसाद आदि इस कला विद्यालय से सम्बन्धित रहे। वहीं मूर्तिकला के क्षेत्र में अपने समय के माईकेल एंजिलो कहे जाने वाले मालीराम जी स्कूल ऑफ आर्ट में शिक्षक होने के साथ कला सृजन करते रहे।

आधुनिक कला परिदृश्य के इस क्रम में स्कूल ऑफ आर्ट जयपुर में सन् 1924 से ऐसा दौर आया जब यहाँ अनेक कला शिक्षक बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट से शिक्षा प्राप्त करके आये और अपने अध्यापन से पुनरुत्थान काल की धारा को प्रवाहित किया। इसी परम्परा में असित कुमार हाल्दार को सन् 1924 में महाराजा स्कूल ऑफ आर्ट में प्राचार्य पद पर नियुक्त किया गया।[9] वे चित्रकार ही नहीं बल्कि मूर्तिकार, हस्तशिल्पी, कला समीक्षक व साहित्यकार भी थे। इनकी कला में अजन्ता, जोगीमारा तथा बाघ गुफा चित्रों के प्रभाव के अतिरिक्त राजपूत और मुगल तथा बंगाल स्कूल का समन्वय भी है। बंगाल से जयपुर आये कलाकार शिक्षकों में सन् 1924 में शैलेन्द्र नाथ डे, हिरण्यमय चौधरी, सन् 1929 में कुशल कुमार मुखर्जी ने यहाँ प्राचार्य व उपाचार्य पद पर शिक्षण कार्य कर विद्यार्थियों को जल रंग व वॉश तकनीक

का ज्ञान दिया। इतना ही नहीं, विद्यार्थियों को प्राचीन और आधुनिक कला शैलियों एवं कला के मूलभूत सिद्धान्तों के बारे में अवगत कराया इससे यहाँ की कला में नवीनता बढ़ने लगी।

राजस्थान में पुनर्जागरण के अग्रणी कलाकार शैलेन्द्र नाथ डे ने नवीन विचारों और कल्पना के तल स्पर्शी सामन्जस्य के साथ प्रेरणास्पद कार्य किया। इन्होंने सन् 1924 में स्कूल ऑफ आर्ट, जयपुर में उपाचार्य पद पर रहते हुए बंगाल शैली का व्यापक प्रसार किया।[10] इनकी कलाकृतियों में रंग व रेखाएँ अधिक सूक्ष्म व गहन भावनाओं से ओत–प्रोत है। चित्रों के बौद्धिक रूपांकन में भारतीय पारम्परिक मूल्यों का आग्रह है। कला में नवीन विचारधारा और कल्पना तथा वॉश तकनीक जैसे माध्यमों का निरूपण है। इनकी आधुनिक कला धारा का प्रवाह इनके शिष्यों पद्मश्री रामगोपाल विजयवर्गीय, देवकीनन्दन शर्मा आदि में प्रवाहित हुआ। टी.पी. मित्रा सन् 1937 में मॉडलिंग के शिक्षक बने। इन्हें सन् 1968 में सेवानिवृत्त होना था पर तीन वर्ष बाद सन् 1971 में सेवानिवृत्ति तक इस संस्थान में शिक्षण कार्य किया।[11] इनके विधिवत् अध्यापन से विद्यार्थी मूर्तिकला के क्षेत्र में क्ले मॉडलिंग से लाभांवित होने लगे। विद्यार्थी जीवित मॉडल से मिट्टी में मॉडल बनाना सीखने लगे। इनके विद्यार्थियों में लल्लू नारायण शर्मा, सुमहेन्द्र आदि प्रमुख थे।

विवेचना के इसी क्रम में आधुनिक कला के विकास में नया मोड़ आने लगा जब नीत–नवीन विचारधाराओं से दीक्षित कलाकार शिक्षक अध्यापन कार्य करने लगे। जयपुर रियासत के तत्कालीन प्रधानमंत्री सर मिर्जा इस्माइल ने रामगोपाल विजयवर्गीय को सन् 1943 में महाराजा स्कूल ऑफ आर्ट एण्ड क्राफ्ट में शिक्षक पद पर नियुक्ति दी।[12] यहाँ इन्होंने आधुनिक कला के क्षेत्र में प्रेरणास्पद कार्य किया। बंगाल की वॉश तकनीक में सिद्धहस्त होने के साथ इन्होंने कागज, सिल्क व केनवास पर भी सफलतापूर्वक कार्य किया। इनकी कला में विषयानुकूल विविधता और नारी प्रधान चित्र की बहुलता देखी जाती है। कला गुरु विजयवर्गीय ने इस संस्थान में सन् 1958 से 1966 तक प्राचार्य पद पर कार्य करते हुए अपने अद्वितीय कलाप्रेम और सादगी तथा अनुशासित अध्यापन से यहाँ पहले से संचालित कलामय वातावरण को चार चांद लगा दिये।[13] इनके शिष्यों में मुख्य रूप से पी.एन. चोयल, एम.के. शर्मा 'सुमहेन्द्र' आदि है। लल्लू नारायण शर्मा ने सन् 1939 में स्कूल ऑफ आर्ट एण्ड क्राफ्ट से मूर्तिकला में डिप्लोमा, सन् 1945 में क्ले मॉडलिंग व सन् 1946 में चित्रकला में विशेष योग्यता प्राप्त की। इन्होंने क्ले मॉडलिंग में स्वर्गीय श्री टी.पी. मित्रा व चित्रकला में श्री रामगोपाल विजयवर्गीय के सौजन्य से कला शिक्षा ली।[14] सन् 1949 में लल्लू नारायण शर्मा ने इस संस्थान में शिक्षण कार्य आरम्भ किया और सन् 1979 में सेवानिवृत्त हुए।[15] इन्होंने मिट्टी, पत्थर, प्लास्टर ऑफ पेरिस में व्यक्ति शिल्प, जन–जीवन तथा महापुरूषों के शिल्पों को रचकर विद्यार्थियों को मूर्तिकला के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराया।

आधुनिक कला सृजन की इसी परम्परा में सन् 1968 से 1988 तक यहाँ पर मोहन शर्मा, सन् 1972 से 2001 तक महेन्द्र कुमार शर्मा 'सुमहेन्द्र' और सन् 1978 से 2007 तक विद्यासागर उपाध्याय ने व्याख्याता पद पर अध्यापन कार्य किया। इन्होंने अपने अध्यापन से विद्यार्थियों को प्रायोगिक ज्ञान के साथ–साथ विश्व के प्रमुख कला आन्दोलनों से अवगत कराया तथा आधुनिक प्रवृत्तियों को सृजन का आधार बनाकर युवाओं को प्रेरित किया। सुमहेन्द्र ने लघु चित्रण शैली में रंग व रेखाओं से नारी सौन्दर्य को रचा और धातु व प्रस्तर शिल्प में कार्य कर अपनी नई पहचान बनाई। इसी प्रकार विद्यासागर उपाध्याय ने प्रकृति से प्रेरित अमूर्तन का श्वेत–श्याम व रंगीन चित्रों की रचना कर अपनी शैलीगत पहचान बनाई। इन्होंने विविध माध्यमों में प्रयोगात्मक कार्य किया तथा अमूर्तन की भाषा को नया चाक्षुष रूप प्रदान किया। सन् 1983 में नरेन्द्र दवे, अंकित पटेल, सुनीत घिल्डियाल एवं सन् 1984 से कार्यरत एकेश्वर हटवाल की रचनात्मक सक्रियता ने भी विद्यार्थियों में माध्यम के प्रयोग व विषयवस्तु के प्रति संवेदनाओं के कई आयाम खोले। नरेन्द्र दवे ने विविध माध्यमों में रेखांकन कर राज्य के समकालीन कला जगत में नई भाषा प्रधान की। अंकित पटेल ने शिल्पों में मूर्त–अमूर्त रूपाकारों के मध्य ताल–मेल बिठाते हुए इन्होंने कानेटिक शिल्प श्रंखला के माध्यम से गतिशील शिल्प रचकर अपनी शैलीगत पहचान बनाई। यहीं नहीं, इन्होंने लकड़ी, एल्यूमिनियम एवं पीतल आदि धातुओं में छोटे–बड़े शिल्प बनाकर समसामयिक कला जगत में खासा नाम अर्जित किया।[16] सुनीत घिल्डियाल और सुरेन्द्र जोशी की कला में मूर्त–अमूर्त रूपाकार जादुई भावनाओं का पथ प्रदर्शन करते हैं। एकेश्वर हटवाल ने रिक्शेवाली चित्र श्रंखला रचकर मानवीय जीवन के संघर्षमय स्वरूप को दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया है। इसी संस्थान से निष्णात कलाकार हरशिव शर्मा सन् 1986 से अध्यापन कार्य करने के साथ अमूर्त शैली में कला सृजन कर रहे हैं। इसी प्रकार सन् 1986 से डॉ. हरिशंकर शर्मा चित्रकला में एवं सन् 1988 से विनोद कुमार मूर्तिकला के अध्यापन के साथ–साथ रचनाशील भी रहे। सन् 1988 से गोपाल प्रसाद, सन् 1991 से मन्जू परिहार, जगमोहन माथोडिया, सन् 1993 से डॉ. ममता चतुर्वेदी तथा सन् 1996 से डॉ. सुरभी बिरमीवाल यहाँ नवाचार शिक्षा के साथ सृजनरत है।

इस संस्था से निष्णात देवकीनन्दन शर्मा ने पशु–पक्षियों को चित्रण का आधार बनाया। इन्होंने वॉश, टेम्परा, भित्ति चित्रण के अलावा पेन, स्याही व जलरंग में कार्य कर अनेक कलाकृतियों का सृजन किया। इनकी कला में विविध विषयों की बहुलता होने के बावजूद मयूर का अंकन विविध भाव मुद्राओं के साथ रूपायित होता रहा। इनकी चित्रित आकृतियों में पारदर्शिता, सौम्यता व शुद्धता परिलक्षित होती है। यही नहीं, इन्होंने वनस्थली विद्यापीठ में सन् 1937 में चित्रकला विभाग का सूत्रपात कर उच्च शिक्षा से विद्यार्थियों को लाभान्वित किया। वे यहाँ सन् 1937 से 1977 तक विभागाध्यक्ष तथा उसके बाद सन् 2005 तक बतौर एमीरटस प्रोफेसर के रूप में सृजनरत रहे। यहाँ सन् 1953 में प्रो. देवकीनन्दन शर्मा ने आचार्य नन्दबाबू और प्रो. विनोद बिहारी मुखर्जी के परामर्श से ग्रीष्मकालीन फ्रेस्को प्रशिक्षण शिविर प्रारम्भ किया। जिससे देशी–विदेशी चित्रकारों को पारम्परिक राजस्थानी कला शैली की महती विशेषताओं के अध्ययन एवं प्रशिक्षण के लिए आकर्षित किया।[17] भवानीशंकर शर्मा ने इस संस्थान में सन् 1971 से 2007 तक नवाचार की धारा से विद्यार्थियों को प्रेरित किया। इन्होंने विविध माध्यमों तेल, जल, स्याही, स्केज पेन, एक्रलिक, मिक्स मिडिया, छापा चित्रों के अलावा फ्रेस्को और सीमेन्ट तथा आयरन में म्यूरल का निर्माण किया है। डॉ. पुष्पा दुल्लर, डॉ.

इन्दुसिंह, डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला इस संस्थान में शिक्षण कार्य के साथ–साथ सृजनरत हैं।

राजस्थान के आधुनिक कलाकार शिक्षकों ने अपनी विलक्षण वैयक्तिकता की नवीन संकल्पना को आत्मसात कर कला का सृजन किया।यहीं नहीं, कला में पाश्चात्य बुद्धिवाद व देशज तत्त्व और आन्तरिक भावाभिव्यक्ति की प्रगाढ़ता एवं तार्किक विचारों को कलाकृतियों में निरूपित करने लगे। यूरोपीय अकादमिक शैली और बंगाल के वॉश पुनरुत्थान की धारा से जुड़े पी.एन. चोयल ने मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर में सन् 1964 से 1982–83 तक अध्यापन कार्य किया। इन्होंने विद्यार्थियों को नवीन कलाधारा का ज्ञान देने के साथ–साथ समसामयिक कलाधारा से जुड़कर अनेक कलाकृतियों की रचना की। कला में जमते–पिघलते रंगों के टेक्सचर में मानवांकन, भैंसे तथा ऐतिहासिक स्थलों को अपने संवेदनशील विचारों से मूर्त–अमूर्त रूप प्रदान किया। इनकी कला में नवीन चित्रण पद्धति का प्रभाव है जो मानवतावादी दृष्टिकोण को प्रतिभाषित करती है। सुरेश शर्मा ने इस संस्थान में सन् 1964 से 1995 तक अध्यापन कार्य किया। वे अत्याधुनिक कलाधारा से जुड़कर अमूर्तन की दिशा में बढ़ते रहे। इनकी कला में आत्मिक अभिव्यक्ति और कल्पना शक्ति का मुक्त संसार है। इन्होंने जल, तेल व एक्रिलिक माध्यम में आन्तरिक जगत के रूप–स्वरूप आकारों को रचकर कला की नवीन चित्रभाषा को इजाद किया है। इसी प्रकार लक्ष्मी लाल वर्मा ने प्राकृतिक बिम्बों को अन्तर्मन में शोधित कर नवीन रूपाकारों का संयोजन किया। वे इस संस्थान से सन् 1968 से 2004 तक जुड़े रहे और विद्यार्थियों में कला की नवीन प्रवृत्तियों की उत्प्रेरणा जागृत करते रहे। संस्था में सन् 1973 से 1997 तक डॉ. शैल चोयल ने अध्यापन कार्य किया। इन्होंने चित्रकला व ग्राफिक विद्या में अनेक कलाकृतियों का सृजन कर अपनी अलग पहचान बनाई है। इन्होंने पारम्परिक कला के बिम्बों व रंगबोध से प्रेरणा लेकर विषयवस्तु के अनुरूप नवीन प्रयोग व तकनीक से कलाकृतियों को रचा है जिसमें चटक रंग, अलंकृत रूपों की सूक्ष्मता, प्रेमातिरेक और श्रृंगारिक भाव मुखरित होते हैं।

इस पीढ़ी की सेवानिवृत्ति के बाद इस विभाग में अभी युवा पीढ़ी के कला शिक्षक पदस्थ है जो सजग रचनाकार के रूप में कार्यशील हैं। संस्थान में सन् 1988 से डॉ. हेमन्त द्विवेदी, सन् 1995 से डॉ. मदनसिंह राठौड़, डॉ. धर्मवीर वशिष्ठ आधुनिक कला के विकास में आत्मिक ऊर्जा का सक्रिय उपयोग कर रहे हैं।

राजस्थान विश्वविद्यालय का कला संकाय सन् 1974 से स्नातकोत्तर कला शिक्षा व सामयिक कला की स्तर वृद्धि में सक्रिय भूमिका निभा रहा है। चिन्मय शेष मेहता ने इस विश्वविद्यालय में सन् 1974 से सेवानिवृत्ति तक अध्यापन कार्य कर अपनी सृजनात्मक ऊर्जा को बनाये रखा। इन्होंने बातिक कला व म्यूरल डिजाइन में रचनात्मक कार्य कर अपनी विशेष पहचान बनाई। इसी प्रकार सन् 1974 से 2007 तक डॉ. शब्बीर हसन काजी ने इस विभाग में शिक्षण कार्य करने के साथ–साथ अमूर्तन की भाषा को शैलीगत रूप में संयोजित किया। इनके ज्यामितीय अमूर्त फलक विशुद्ध सपाट रंगों में निरूपित है। इनके प्रत्येक फलक अन्तः चक्षु से रूपायित हैं, जिनमें रंगों की कोमलता और भावाभिव्यक्ति की गहराई है।

नवपरम्परावादी कलाकार डॉ. नाथूलाल वर्मा ने सन् 1984 से 2006 तक इस कला संकाय में अध्यापन कार्य कर कला शिक्षण व आधुनिक कला को गतिरूप दिया। इन्होंने राजस्थान के प्रचलित लोक कथानकों, लोक उत्सवों और काव्यांशों को लेकर नवीन रूपाकारों से कलाकृतियों का सृजन किया। 'मूमल–महेन्द्र', 'ढोला–मारू', 'जेठव उजली' प्रेम गाथाओं में नायक–नायिकाओं की भावाभिव्यक्ति के साथ राजस्थान के मरूस्थलीय सौन्दर्य और वास्तुशिल्प का कलात्मक चित्रण है।[18] डॉ. आर.के. वशिष्ठ, डॉ. कमला गर्ग, डॉ. रीता प्रताप इस कला संकाय से जुड़े रहे। डॉ. वीरबाला भावसार ने सन् 1974 से 2001 तक इस कला संकाय से जुड़ कर कला का सृजन किया। इनकी कला में लोकान्मुख आकृतियों की सरलता और ज्यामितीय शुद्धता परिलक्षित होती है। रंग व रेखाओं से निर्मित आकृतियों में रेत माध्यम का सामंजस्य कर एक नया चाक्षुष प्रभाव उत्पन्न किया है। वर्तमान में इस संकाय में डॉ. लोकेश जैन, डॉ. आई.यू.खान, डॉ. बीना जैन आदि कला शिक्षक पदस्थ हैं जो कला शिक्षा व आधुनिक कला को गतिमान बनाये हुए हैं।

इसी क्रम में राजस्थान विश्वविद्यालय के अधीन महारानी कॉलेज, जयपुर में सन् 1963 से 1974 तक कला शिक्षक के पद पर कार्य करते हुए मोनी सान्याल ने बंगाल स्कूल को प्रसारित किया साथ ही व्यक्ति चित्र, दृश्य चित्र और ग्रामीण दृश्य तथा भूमिहीन लोगों को चित्रित किया।

आधुनिक कला के विकास में महाविद्यालय स्तर के कला संस्थान का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा। दयानन्द महाविद्यालय, अजमेर में सन् 1953 से 1978 तक प्रो. साखलकर ने यहाँ विभागाध्यक्ष के रूप अध्यापन कार्य किया।[19] इनके शिक्षण से विद्यार्थियों में जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट की आधुनिक कलाधारा का प्रवाह प्रवाहित होने लगा। साथ ही, इन्होंने नवीन विचारधाराओं के साथ मूर्त–अमूर्त चित्रों का सृजन किया।कला में रंग व रेखाओं की भावाभिव्यक्ति कलाकार की संवेदनाओं व अनुभव को अभिव्यक्त करती है। इसी प्रकार सन् 1964 से 1997 तक राम जैसवाल ने यहाँ अध्यापन कार्य करने के साथ विद्यार्थियों को आधुनिक चेतना व पारदर्शी जल रंग पद्धति का ज्ञान दिया। इन्होंने दृश्य चित्रण के साथ–साथ पारम्परिक और समसामयिक विषयों को अपने संवेदनशील विचारों से चित्रित कर राष्ट्रीय स्तर पर अपनी शैलीगत पहचान बनाई। इनके दृश्य चित्रों में तुलिका, स्पर्श, गति और रंग वैविध्य दर्शनीय हैं, वह इसमें व्याप्त कोलाहल को मुखर करता है।[20] इसी प्रकार सन् 1976 से सविन्द्र सिंह चुग व सन् 1981 से 2011 तक डॉ. अनुपम भटनागर इस संस्था से जुड़कर कला सृजन करते रहे वहीं युवा कलाकार प्रमोद कुमार सिंह सन् 1998 से 2011 तक इस संस्था से जुड़े तथा वे पेन्सिल, ड्राईपेस्टल, कलर, इंक, एक्रलिक, तेलरंग, टेम्परा, स्टेनग्लास विण्डो तथा म्यूरल व मोजाइक आदि माध्यमों में सृजन करते हैं।

उपरोक्त कलाकार शिक्षकों के अलावा राज्य के अन्य कलाकार शिक्षक हैं जो यहाँ की अन्य कला शिक्षण संस्थाओं से जुड़कर या निष्णात कलाकार के रूप में स्वतन्त्र रूप से कला का सृजन करते रहे, कर रहे हैं। कलाकार शिक्षक रमेश सत्यार्थी, मीनाक्षी भारती, किरण मुर्डिया, गगन दाधीच, राजीव गर्ग, विष्णु प्रकाश माली, मीना बया, युगल किशोर तथा स्वतन्त्र कलाकार के रूप में राजेन्द्र मिश्रा, दीपिका हाजरा, अब्बास बाटलीवाला, रामेश्वर सिंह, रवि मिश्रा

आदि आधुनिक कला शैलियों में प्रयोग करके नवीन कलाधारा का सृजन करते रहे हैं।

वैश्वीकरण के इस दौर में कलाकार शिक्षक व स्वतन्त्र कलाकार वैज्ञानिक अनुसंधान एवं गणितीय अवधारणाओं को अपनाकर नवीन कला प्रवृत्तियों को प्रमुखता देने लगे हैं। कला शिक्षण संस्थाओं में अनेकानेक कलाधारायें प्रवाहित हो रही हें। निःसंदेह आज राज्य के नवयुवक कलाकार नवीन विचार विषयक धारणाओं, विविध माध्यमों और प्रयोगों से नीत–नवीन रूपों को सृजित कर रहे हैं तथा वे समसामयिक कला में अपनी कलागत पहचान बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

संदर्भ

1. शुक्ल, प्रयाग : कला समय समाज, ललित कला अकादेमी, रविन्द्र भवन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1979, पृष्ठ 1
2. साखलकर, र.वि. : कला के अन्तदर्शन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2004, पृष्ठ 197
3. शुक्ल, प्रयाग : कला समय समाज, ललित कला अकादेमी, रविन्द्र भवन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1979, पृष्ठ 3 या दमामी, ए.एल.: राजस्थान की आधुनिक कला एवं कलाविद्, हिमांशु पब्लिकेशंस, उदयपुर, □ नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2004, पृष्ठ 13
4. अग्रवाल, डॉ. श्याम बिहारी : रूपशिल्प, ज्वालाप्रसाद विद्यासागर, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1986, पृष्ठ 29
5. राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट, प्रोस्पेक्टस BVA/ MFA, 2008-09, पृष्ठ 2
6. नीरज, डॉ. जयसिंह व शर्मा, डॉ. भगवती लाल : राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, अठारहवां संस्करण, 2007, पृष्ठ 104
7. पंवार, डॉ. ललित के. : आकृति, राजस्थान की बीसवीं सदी (पूर्वार्द्ध) की कला, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 2000–2001, पृष्ठ 1
8. चतुर्वेदी, डॉ. ममता : चित्रा, त्रैमासिकी– जुलाई–सितम्बर 2005, अंक 1, पृष्ठ 1
9. जैन, गुलाब चन्द : भारतीय चित्रकला एवं शिक्षण सामग्री, लायल बुक डिपो, बेगम–ब्रिज रोड़, मेरठ, पृष्ठ 78
10. चतुर्वेदी, डॉ. ममता : समकालीन भारतीय कला, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ 40
11. नीरज, डॉ. जयसिंह व शर्मा, डॉ. भगवती लाल : राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, अठारहवां संस्करण, 2007, पृष्ठ 78
12. चतुर्वेदी, डॉ. ममता : रामगोपाल विजयवर्गीय एक शताब्दी की कला यात्रा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2005, पृष्ठ 9
13. मिश्र, अवधेश : कला दीर्घा (दृश्य कला की छमाही पत्रिका) अप्रेल 2003, वर्ष 03, अंक 6, पृष्ठ 25
14. बिरमीवाल, सुरभि : लल्लू नारायण शर्मा 'गौतम', मोनोग्राफ, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1993, पृष्ठ 2
15. वही, पृष्ठ 2
16. नीरज, डॉ. जयसिंह व शर्मा, डॉ. भगवती लाल : राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, अठारहवां संस्करण, 2007, पृष्ठ 81
17. गौतम, आर.बी. : देवकीनन्दन शर्मा, मोनोग्राफ, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, सन् 1981, पृष्ठ 7
18. मेहता, प्रो. चिन्मय : राजस्थान के समसामयिक कलाकार– 92, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, पृष्ठ 22
19. चुग, सविन्द्र सिंह, ''मालाकार'', बिरदी चन्द : भारतीय चित्रकला, प्रथम संस्करण, 2004, पृष्ठ 143
20. गर्ग, गोपाल : रामजैसवाल, मोनोग्राफ, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, सन् 1997, पृष्ठ 7